Journal of Advances in Developmental Research (IJAIDR)
E-ISSN: 0976-4844 ● Website: www.ijaidr.com ● Email: editor@ijaidr.com

तीसरा रंगमंच: मानव सभ्यता और संस्कृति रचना

पप्पू राम

सहायक आचार्य –हिंदी
विद्या सम्बल योजना
राजकीय कन्या महाविद्यालय निठार, भुसावर भरतपुर

रंगमंच और मानव सभ्यता का संबंध अत्यंत प्राचीन है, जो संस्कृति के विकास के साथ-साथ निरंतर विकसित होता रहा है। जब हम मनुष्य को संस्कृति के केंद्र में रखते हुए इस संबंध पर विचार करते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि रंगमंच न केवल जीवन के संघर्षों से जुड़ा हुआ है, बल्कि यह मनोरंजन और खेल की प्रवृत्तियों का भी अभिन्न हिस्सा है। इन दोनों प्रवृत्तियों को समझते हुए जब हम रंगमंच पर विचार करते हैं, तो यह जाहिर होता है कि यह कला का एक ऐसा माध्यम है, जिसमें मनोरंजन अन्य कलाओं की तुलना में अधिक प्रमुखता से दिखाई देता है। हालांकि, यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह जीवन के विभिन्न पक्षों को अभिव्यक्त करते हुए दर्शकों को सोचने और सवाल करने के लिए प्रेरित करता है।भारत में रंगमंच की दो प्रमुख परंपराएँ समानांतर रूप से विकसित हुई हैं - एक नाट्यधर्मी रंगमंच परंपरा और दूसरी लोकधर्मी रंगमंच परंपरा। जब हम हिंदी रंगमंच के उद्भव और विकास पर विचार करते हैं, तो हमारी सबसे पहली दृष्टि संस्कृत रंगमंच पर पड़ती है। संस्कृत के साथ-साथ पाली, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में भी नाट्य मंच का उल्लेख मिलता है। भारतीय रंगमंच की परंपरा में अंग्रेजी शासन के दौरान, विशेष रूप से उन्नीसवीं शताबदी में, व्यावसायिक रंगमंच के रूप में पारसी रंगमंच का उदय हुआ। इस संदर्भ में नेमीचंद्र जैन का मानना है कि "उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में पश्चिम से अंग्रेज उपनिवेशवादियों के माध्यम से जो रंगमंच हमारे देश में आया, वह मूलतः ह्रासोन्मुख रंगमंच था, जिसे अंग्रेजों ने जाने-अनजाने हम पर थोप दिया।"

आधुनिक हिंदी रंगमंच के इतिहास में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अव्यावसायिक रंगमंच की दिशा में अभूतपूर्व योगदान दिया और हिंदी नाटक तथा रंगमंच की नींव रखी। भारतेंदु के पश्चात, जयशंकर प्रसाद ने अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से हिंदी नाट्य परंपरा और रंगमंच को एक नया मुकाम प्रदान किया। उनके योगदान के बाद, उपेंद्रनाथ 'अश्क', लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, विष्णु प्रभाकर, जगदीशचंद्र माथुर, मोहन राकेश जैसे नाट्यकारों और रंगकर्मियों ने रंगमंच को नई दिशा दी।

बीसवीं शताबदी के पांचवे दशक में भारतीय रंगमंच में और अधिक गतिशीलता आयी, विशेषकर हिंदी रंगमंच के क्षेत्र में। संगीत नाटक अकादमी और राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय जैसी संस्थाओं की स्थापना के परिणामस्वरूप राष्ट्रीय रंगमंच की नींव रखी गई। साथ ही स्वतंत्र नाटककारों, निर्देशकों और अभिनेताओं ने रंगमंच को गति दी। 1970 के दशक तक यह आंदोलन व्यापक रूप से रंगदोलन के रूप में विकसित हुआ। इस दौर में कई नाटककार, रंगकर्मी और नाट्य संस्थाएं नए तत्वों की खोज और नए रंगप्रयोगों की दिशा में अग्रसर हुईं।

इन रंगप्रयोगों में एक महत्वपूर्ण योगदान था वादल सरकार का 'तीसरा रंगमंच', जिसे सातवें दशक के रंगमंच का एक महत्वपूर्ण मोड़ माना जा सकता है। यदि कहा जाए कि इस दौर का रंगपरिवेश मोहन राकेश, विजय तेंदुलकर,

गिरीश कर्नाड और बादल सरकार के योगदान से ही संपूर्ण होता था, तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। हालांकि, इन सभी में केवल बादल सरकार ही ऐसे थे जिन्होंने शुरुआत से लेकर अंत तक रंगकर्म को प्राथमिकता दी और इस क्षेत्र में निरंतर सक्रिय रहे। देवेंद्र राज अंकुर के अनुसार, "बादल सरकार ही ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने हमेशा रंगकर्म को अपने जीवन का हिस्सा माना और आज भी उतने ही सक्रिय हैं। उनकी सक्रियता त्रिआयामी रूप में प्रस्तुत होती है - पहले अभिनेता, नाटककार और निर्देशक के रूप में, फिर नाटककार के रूप में तीन विभिन्न दौरों के नाट्यलेखन से गुजरते हुए, और अंत में एक रंगचिंतक के रूप में भारतीय रंगकर्म में एक नए सिद्धांत के प्रवर्तक के रूप में स्थापित होते हुए।"

तीसरे रंगमंच की पृष्ठभूमि पर विचार करते हुए हम यह पाते हैं कि इससे पूर्व दो प्रमुख रंग परंपराएं अस्तित्व में थीं। पहली परंपरा थी यथार्थवादी रंगमंच, जो पूरी तरह से पश्चिमी देशों से आयातित थी और जिसका मूल आधार पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित था। इसका मुख्य उद्देश्य दर्शकों को विभ्रम की दुनिया में खो जाने के लिए प्रेरित करना था। दूसरी परंपरा थी लोक या पारंपरिक रंगमंच, जो अपनी विशिष्टता में भरपूर मनोरंजन, जैसे गीत, संगीत, नृत्य, मुद्राएं, आकर्षक वेशभूषा, रंग और रूप-सज्जा जैसे तत्वों के माध्यम से दर्शकों को एक कल्पनालोक में ले जाने में सक्षम थी।

इन दोनों रंग परंपराओं में रंगमंच का उद्देश्य केवल मनोरंजन या भ्रम का निर्माण करने तक सीमित था, जबकि जनआकांक्षाओं और सामाजिक वास्तविकताओं का कोई स्पष्ट प्रतिनिधित्व नहीं था। यह द्वि-विभाजन हमारे समाज की जमीनी समस्याओं से अनभिज्ञ रहने और औपनिवेशिक मानसिकता को बढ़ावा देने में सहायक बन रहा था। अगर इन परंपराओं में जनआकांक्षाओं का अभिव्यक्तिकरण किया जाता, तो भी उन्हें अंतिम जन तक पहुंचाना और निरंतरता बनाए रखना अत्यंत कठिन होता।

इसी संदर्भ में, बादल सरकार ने उपर्युक्त दोनों परंपराओं से अलग एक "तीसरे रंगमंच" की अवधारणा प्रस्तुत की। उनके अनुसार, "हमारी संस्कृति में जो दुर्भाग्यपूर्ण द्वि-विभाजन दिखता है, उसे अपने सामाजिक-आर्थिक ढांचे में मूलभूत परिवर्तन किए बिना समाप्त करना असंभव है।... मैं विश्वास करता हूं कि रंगमंच उन जरूरी हस्तक्षेपों में से एक है, जो एकजुट होकर सार्थक परिवर्तन ला सकते हैं। इसीलिए 'तीसरे रंगमंच' का विचार मेरे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।"

तीसरे रंगमंच की अवधारणा के तहत, बादल सरकार ने किसी एक रंगशैली को स्वीकार करने के बजाय, दोनों प्रमुख रंग परंपराओं का गहन विश्लेषण किया। उन्होंने इन परंपराओं की विशेषताओं, कमियों और उनके जन्म के कारणों का अध्ययन करते हुए एक ऐसा रंगमंच स्थापित करने का प्रयास किया, जो इन दोनों धाराओं का संतुलित संकलन हो। इस संदर्भ में बादल सरकार ने स्पष्ट रूप से कहा, "हमने अपने रंगमंच में वह सब लिया जो हमें आवश्यक था, बिना इस पर विचार किए कि वह देशज है या विदेशी। रंगमंच के विकास के दौरान, हमने कभी भी किसी एक रंगदल (प्रोसेनियम) का अनुकरण करने की कोशिश नहीं की... हमारा मुख्य ध्यान इस बात पर था कि हम जो कहना चाहते थे, क्या हम उसे कह पा रहे हैं या नहीं।"

इस प्रकार, यह स्पष्ट होता है कि तीसरा रंगमंच न तो विदेशी रंगमंच के यथार्थवाद को अपनाने के लिए तैयार था, और न ही देशी रंग परंपराओं के मोह में फंसने को। इस रंगमंच की सबसे पहली विशेषता यह थी कि इसमें अभिनेता को शहरी या ग्रामीण विशेषण से बाहर कर, उसे आम मध्यमवर्गीय आदमी से जोड़ा गया। इसके बाद,

आर्थिक समस्याओं के कारण न्यूनतम संसाधनों के साथ रंगकर्म को बढ़ावा दिया गया। ऐसे में अभिनेता की वाणी और शरीर ही उसके प्रमुख उपकरण बन गए। इन दोनों तत्वों के भीतर से, रंगमंचीय संभावनाओं को तलाशने के लिए एक भाषिक आलेख का निर्माण किया गया। इस प्रकार, पूरी रचना प्रक्रिया का ढांचा उलट गया।

तीसरा रंगमंच भारतीय रंग परंपराओं से प्रभावित होने के साथ-साथ, पाश्चात्य रंग प्रयोगों से भी प्रेरित था। इस बारे में बादल सरकार ने बताया कि, "इस चिंतन प्रक्रिया पर हमारे लोक रंगमंच की जात्रा, तमाशा, भवई, कथकली जैसी रंगधाराओं का प्रभाव रहा, साथ ही लंदन का 'थिएटर-इन-द-राउंड', पेरिस में जोआन लिटिलवुड की प्रस्तुतियाँ, मास्को के यूरी ल्युविमाव का काम, प्राग में जारी का मूकाभिनय, रॉक्ला में थिएटर लैबोरेटरी में जर्जी ग्राटोवस्की के कार्य, और अन्य रंगकर्मियों जैसे जूलियन वेक, जुडिथ मालिना, रिचर्ड शेखनर और एंतोनियो सरशियो से विचार विनिमय ने मेरी सोच को आकार दिया। और इन्हीं सभी अनुभवों से गुजरते हुए मैं तीसरे रंगमंच तक पहुँचा।"

तीसरे रंगमंच ने रंगकर्म के पारंपरिक ढांचे को तोड़ते हुए उसे एक नई दिशा दी। प्रोसीनियम रंगमंच, प्रेक्षागृह, मंच, मंच उपकरणों, प्रकाश, वेशभूषा, संगीत, टिकट, विज्ञापन, पोस्टर और प्रचार जैसी पारंपरिक रंगकला की अनिवार्यताओं से इसे मुक्त किया। इसके परिणामस्वरूप न केवल रंगमंच और प्रेक्षकों के लिए आर्थिक रूप से सहूलियतें प्राप्त हुईं, बल्कि रंगमंच के आयोजन को भी अधिक लचीला बना दिया गया। अब एक ही स्थान से दूसरे स्थान तक रंगमंच को आसानी से ले जाया जा सकता था, जिससे न केवल प्रस्तुतियों की भौतिक सीमाएं हटीं, बल्कि रंगमंच के अनुभव की गतिशीलता भी बढ़ी।

यह तीसरा रंगमंच एक प्रकार से अंतरंग और सजीव अनुभव प्रदान करने वाला था। इसमें कलाकारों और दर्शकों के बीच की दूरी को कम कर दिया गया, जिससे कलाकार दर्शकों को न केवल देख सकते थे, बल्कि उनसे शारीरिक और मानसिक रूप से जुड़ भी सकते थे। नाटक अब किसी एक निश्चित स्थान पर निर्भर नहीं था, बल्कि यह कहीं भी, कहीं भी हो सकता था। इस प्रक्रिया में दर्शक न केवल खड़े रहकर नाटक का भाग बन सकते थे, बल्कि वे खुद को रंगमंच का हिस्सा महसूस कर सकते थे।

इस रंगमंच में कोई अलग से स्टेज़ नहीं होता। अगर कोई कमरा था तो दर्शकों के बीच में, जमीन पर या फ्लोर पर ही प्रदर्शन किया जाता। यदि प्रदर्शन खुले आकाश या किसी अन्य मुक्त स्थान पर होता, तो वह भी समान रूप से प्रस्तुत किया जाता, ताकि दर्शक और कलाकार एक ही वातावरण में, एक समान अनुभव को महसूस कर सकें। तीसरे रंगमंच की इस अवधारणा ने दर्शकों के बैठने के तरीके को भी बदल दिया। नाट्य प्रस्तुति की आवश्यकताओं के अनुसार बैठने के तरीके में परिवर्तन किया जा सकता था, जिससे हर प्रदर्शन का अनुभव नितांत व्यक्तिगत और अनूठा होता था।

इस परिवर्तन का सबसे बड़ा लाभ यह था कि अब रंगमंच की भाषा में गहरे भावनात्मक आदान-प्रदान की संभावना बढ़ गई थी। दर्शक और कलाकार एक-दूसरे के अत्यंत नजदीक होते हुए अपने विचारों और भावनाओं को सीधे साझा कर सकते थे। इससे न केवल रंगमंच का अनुभव अधिक सजीव और प्रभावशाली हुआ, बल्कि यह दर्शकों को नाटक में पूरी तरह से डूबने का अवसर भी प्रदान करता था। तीसरा रंगमंच न केवल एक स्थानिक रूप में बदलाव लाया, बल्कि यह रंगकर्म के संवेदनात्मक और मानसिक आयामों में भी एक नई क्रांति लेकर आया।

इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण है कि एक नए प्रकार के मंच और नाट्यालेख के लिए 'अभिनय शैली' भी एक नई दिशा में विकसित होनी चाहिए। इसी कारण, बादल सरकार ने नाट्यलेख की कतरन और छंटाई का कार्य स्वयं न करके

इसे रंगकर्मियों के हाथों में सौंप दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि नाट्यलेख केवल शब्दों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि वह एक ऐसी प्रस्तुति का रूप धारण करने लगा जो उससे कहीं अधिक प्रभावशाली थी। इस प्रक्रिया ने सभी कलाकारों को अपनी भूमिका की अहमियत का अहसास कराया और एक सामूहिक अभिनय पद्धति का विकास हुआ। कलाकारों ने अपने शरीर, आवाज़, और व्यक्तित्व के ऐसे पहलुओं को अभिनय में ढूंढ निकाला, जिनकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी।इससे रूढ़िवादी अभिनय पद्धतियों या प्रसिद्ध अभिनेताओं की नकल करने की बजाय, प्रत्येक कलाकार के भीतर एक व्यक्तिगत रचनात्मक प्रक्रिया का आरंभ हुआ। तीसरे रंगमंच की अभिनय पद्धति में विशेष रूप से शारीरिक गतियों (फिजिकल एक्टिंग) और ध्वनियों पर जोर दिया गया। अभिनेता अब केवल मंच पर किसी एक निश्चित चरित्र का निर्वाह नहीं करते थे, बल्कि वे किसी वर्ग, समूह, या मानसिकता की मानसिकता का निरूपण करते थे।बादल सरकार ने इस संदर्भ में कहा था, "मेरा आग्रह समूह अभिनय, मूकाभिनय, छंदमय गति, गीत और नृत्य पर ज्यादा रहा और इस प्रकार 'भाषा' के महत्व को हम काफी हद तक कम कर सके।" इसमें अभिनय के अन्य तरीकों को भी अपनाया गया, जैसे नृत्य, गीत, पैरोडी, रीति-रीतिबद्धता, गोलाकार गतियाँ, दिलचस्प संयोजन, और मंच उपकरणों का अभिनेताओं द्वारा रचनात्मक प्रयोग। संगीत की बजाय, अभिनेता सार्थक और निरर्थक ध्वनियों, चीख-पुकार और शोर का उपयोग करते थे। कई बार एक ही अभिनेता द्वारा कई चरित्रों का चित्रण भी किया जाता था, जिससे अभिनय के संवाद और अभिव्यक्ति के नए तरीके सामने आते थे।

इस परिवर्तन ने अभिनय में एक नए प्रकार की संवाद-शैली को जन्म दिया, जिससे मंचीय विधान और अभिनय पद्धति ने दर्शक और कलाकार के बीच की दूरी को लगभग समाप्त कर दिया। परिणामस्वरूप, एक 'मानवीय' संबंध स्थापित हुआ, जिसमें अभिनेता और दर्शक एक दूसरे से केवल क्रेता और विक्रेता के रूप में नहीं, बल्कि एक गहरे और सघन संबंध के रूप में जुड़े हुए थे। इस प्रकार तीसरे रंगमंच ने न केवल रंगकर्म की शारीरिक और मानसिक सीमाओं को तोड़ा, बल्कि कलाकार और दर्शक के बीच एक नई सामूहिकता और साझा अनुभव की संभावना भी उत्पन्न की।

तीसरे रंगमंच के संदर्भ में बादल सरकार का दृष्टिकोण था कि यह 'सत्य' और 'गढ़े हुए सत्य' के बीच की दूरी को समाप्त करने के लिए समर्पित था। उनका मानना था कि रंगमंच केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि समाज में छिपी हुई सच्चाइयों और आधे सचों की जांच पड़ताल करने का एक शक्तिशाली यंत्र होना चाहिए। जैसे उन्होंने कहा था, "हम कोशिश करते हैं कि ऐसी छिपाई गई सच्चाइयों और अर्ध-सत्यों को उजागर कर लोगों तक पूरी सच्चाई का प्रचार किया जा सके। हमारे द्वारा पहचाने गए तथ्यों को दर्शक साझा कर सकें, उन्हें बांट सकें। यही हमारा रंगमंच है।"

तीसरे रंगमंच ने नाट्यलेखन के पारंपरिक रूप को बदल दिया। नाटक अब केवल लेखक या निर्देशक द्वारा दुरुस्त और संपादित नहीं किया जाता था, बल्कि यह एक सामूहिक प्रयास बन गया। नाटक की स्क्रिप्ट अब रंगकर्मियों के योगदान से तैयार होती थी, जिससे 'पूर्वाभ्यास' जैसी पारंपरिक पद्धतियों की जगह एक जीवंत और सहज रंगकला का जन्म हुआ। बादल सरकार का कहना था, "हमने अभिनेता-निर्देशक के पारंपरिक संबंधों को तोड़ा और सभी कलाकार नाटक की प्रस्तुति में पूरी तरह से शामिल हो गए। यह हिस्सेदारी अभूतपूर्व थी।"

रंगमंच के इतिहास में सामान्यतः नाटक कथानक और पात्रों पर आधारित होते हैं, लेकिन तीसरे रंगमंच ने इन सीमाओं को तोड़ा। 'कहानी' अब विषयवस्तु (Theme) से जुड़ी थी, और 'पात्र' को किस्म (Type) के रूप में प्रस्तुत

किया गया। इस रंगमंच ने 'चरित्रों' के स्थान पर 'समूह' की संभावनाओं को प्राथमिकता दी, और अभिनेता के आपसी संवादों के स्थान पर दर्शकों से सीधे संवाद पर बल दिया। इस प्रक्रिया में 'भाषा' से ज्यादा 'शारीरिक भंगिमाओं' और 'संचार' को प्रमुखता दी गई।

बादल सरकार ने कहा था, "नाटक को दृश्य और अंकों में बांटना, काल को एक क्रम में सजाना, स्पेस की सीमाओं में बांधना आदि यांत्रिक नियमों से खुद को मुक्त कर पाया। मैंने मंच को एक साथ विभिन्न 'काल' और 'स्थान' के लिए प्रयोग किया।" इसने न केवल रंगमंच की पारंपरिक सीमाओं को तोड़ा, बल्कि नये प्रयोगों के द्वार भी खोले।हालांकि, इस रंगकर्म की सीमाएं थीं, और यह प्रयोग सामान्यतः आगे नहीं बढ़ सका, लेकिन इसका सबसे बड़ा योगदान यह था कि इसने जनभागीदारी को केंद्र में रखा। तीसरे रंगमंच ने शहरी और ग्रामीण रंगमंच की ताकत और कमजोरी को पहचानते हुए, एक ऐसा मंच प्रस्तुत किया जो भारत के गांव और शहरों को जोड़ने वाला था। इसने मंच, सभागार, प्रकाश व्यवस्था, मंच सज्जा, और उपकरणों जैसी पारंपरिक सीमाओं को तोड़ते हुए रंगकर्म को एक नया रूप दिया। यह एक ऐसा रंगमंच था जिसे कहीं भी और कभी भी प्रस्तुत किया जा सकता था।

यह सही है कि कोई भी विचारधारा या प्रयोग कभी स्थायी रूप से लोकप्रिय नहीं रहता। तीसरे रंगमंच का प्रभाव भी एक सीमित अवधि तक ही था, लेकिन इसने भारतीय रंगमंच को एक नई दिशा दी। यह न केवल भाषाई और सांस्कृतिक सीमाओं को तोड़ने में सफल रहा, बल्कि मराठी, हिंदी, पंजाबी, गुजराती, मलयाली, कन्नड़, ओड़िया जैसे विभिन्न भारतीय भाषाओं में बादल सरकार के नाटकों का मंचन हुआ, जिससे देश भर के रंगकर्मियों ने इसे अपनाया। बादल सरकार ने आंगन, छत, नुक्कड़, और गांवों में नाटकों का आयोजन करके नाटक को एक नया परिपेक्ष्य दिया और इस प्रक्रिया में उन्होंने रंगमंच को एक व्यापक और सार्थक आयाम प्रदान किया।

संदर्भ ग्रन्थः-

1. नेमिचंद्र जैन, रंगदर्शन, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, परिवर्धित संस्करण-1993, पृष्ठ संख्या-181
2. देवेंद्र राज अंकुर, *रंगमंच और मनोविज्ञान*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण-2005, पृष्ठ संख्या-134
3. देवेन्द्र राज अंकुर, पहला रंग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, परिवर्धित संस्करण-1999, पृष्ठ संख्या-112
4. बादल सरकार, व्यक्ति और रंगमंच, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, पहला साजिल्द संस्करण-2009, पृष्ठ संख्या-20
5. बादल सरकार, व्यक्ति और रंगमंच, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, परिवर्धित साजिल्द संस्करण-2009, पृष्ठ संख्या-51
6. बादल सरकार, व्यक्ति और रंगमंच, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद, परिवर्धित संस्करण-2009, पृष्ठ संख्या-61
7. देवेन्द्र राज अंकुर, पहला रंग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, परिवर्धित संस्करण-1999, पृष्ठ संख्या-116